P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-II * Issue-XII*August-2015

भारत का विभाजन तथा मोहम्मद अली जिन्ना

सुरेन्द्र पाल सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
बैसवारा पी0 जी0 कालेज,
लालगंज, रायबरेली

सारांश

15 अगस्त 1947 को लार्ड माउन्टवेटन योजना के अन्तर्गत भारत का विभाजन हो गया। इस विभाजन को संभव बनाने में जिन्ना ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। यह आश्चर्य की बात थी कि जिन्ना की इस उपलब्धि के पीछे कोई आन्दोलन अथवा संघर्ष नहीं था। उन्होने केवल तिकड़म के सहारे एक राज्य की स्थापना की थी। विभाजन के उपरान्त दोनो राज्य में विशाल पैमाने पर नरसंहार हुआ, मीलों लम्बे शरणार्थियों के काफिलों ने सीमान्तों को पार करके अपने लिए नये घरों को बसाया। इतिहास को इन घटनाओं को विस्मृत करना सुगम नहीं है। यह आशा की गयी कि विभाजन केवल मानचित्र पर होगा। दिलों का बटवारा नहीं होगा। परन्तु यह आशा भी निराशा में परिवर्तित हो गयी। दोनो देशो के बीच अविश्वास और घृणा की दीवार आज भी ज्यों कि त्यों खड़ी है। स्वयं पाकिस्तान भी अपने यहा रहने वालों के बीच पायी जाने वाली घृणा से मुक्त नहीं है। ऐसी स्थिति में आज का इतिहासकार जिन्ना के अनुचरो से यह प्रश्न पूछने के लिए विवश है कि क्या धार्मिक उन्माद के आधार पर एक राज्य की स्थापना उन मानवीय आदर्शो के अनुकूल है जिनका उल्लेख उनकी पवित्र पुस्तक कुरानशरीफ में निहित है?

मुख्य शब्दः नरसंहार, शरणार्थी, धार्मिक उन्माद, मानवीय आदर्श, कुरान शरीफ।

प्रस्तावना

स्वाधीनता के पूर्व की भारतीय मुस्लिम राजनीति के सर्वमान्य नेता और पाकिस्तान के जनक मोहम्मद अली जिन्ना का जन्म करांची में एक खोजा मुस्लिम परिवार में 25 दिसम्बर 1876 को हुआ था। पिता जिन्ना भाई एक सम्पन्न व्यापारी थे, करांची में उनकी गणना बड़े व्यापारियों में होती थी। जब मोहम्मद अली केवल बालक थे तो उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की कि ''मैं एक बैरिस्टर बनना चाहता हूँ।'' फलतः अपने परिवार का धन्धा छोड़कर उन्होंने ''लिटिल गो'' की परीक्षा की तैयारी आरम्भ कर दी। यहां यह ज्ञातव्य है कि उन दिनों ''लिटिल गो'' की परीक्षा ''लिन्कनूस इन'' में प्रवेश पाने के लिए इच्छुक प्रत्याशियों के लिए आयोजित की जाती थी। 1893 में इस परीक्षा में उत्तीर्ण होने के उपरान्त उन्होंने अपने नाम के आगे ''जिन्ना'' और जोड़ लिया तथा ''इन'' में प्रवेश ले लिया।

1895 में कानून की परीक्षा पास करने के बाद 18 वर्ष की अल्पायु में उन्होंने ''बार'' की सदस्यता प्राप्त कर ली। सम्भवतः इतनी कम आयु का बैरिस्टर भारत में उस समय कोई दूसरा नहीं था।

1895 में जब वह लन्दन से भारत लौट कर आये, तो उन्हें दो पारिवारिक विपत्तियों का सामना करना पड़ा। 1895 में ही उनकी माँ का निधन हो गया तथा 1896 में उनके पिता के व्यापार को एक बड़ा धक्का लगा। इन विपत्तियों से घबड़ा कर उन्होंने करांची छोड़ने का निश्चय कर लिया और वह बम्बई में आकर वकालत करने लगे। आरम्भ में उनकी वकालत ऐसी नहीं थी जिसे उत्साहवर्धक कहा जाता। परन्तु इस कठिन समय में भी उन्होने साहस नहीं छोड़ा और किसी को यह अहसास नहीं होने दिया कि वह एक कड़े समय में से होकर गुजर रहे हैं। एक बार न्यायिक विभाग के प्रभारी सदस्य सर चार्ल्स ओलवियन्ट ने उनके समक्ष 1500/– रूपये प्रतिमाह की एक नौकरी देने का प्रस्ताव रखा था, जिसे उन्होने यह कह कर अस्वीकार कर दिया कि वह बहुत जल्द इतना धन एक दिन में कमाने योग्य हो जायेंगे। वस्तुतः ऐसा ही हुआ। कुछ वर्ष बाद जब उनकी भेंट सर चार्ल्स से हुई तो उन्होंने जिन्ना को उनकी सफलता पर बधाई दी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वकालत के आरम्भिक दिनों से ही जिन्ना ने साहस एवं वैचारिक स्वतंत्रता का परिचय दिया था। जोकम अल्वा ने लिखा कि ''वह हमारे सबसे अधिक निर्भीक एडवोकेट रहे हैं, कोई भी न्यायाधीश उन्हें भयाभिभूत नहीं कर सका। उन्होंने कभी कोई अपमान बरदाश्त नहीं किया।''[1]

राजनीति में जिन्ना ने असांविधानिक एवं हिंसात्मक तरीकों में कोई आस्था व्यक्त नहीं की, यथार्थ में उन्हें ऐसे तरीकों से घोर अरूचि थी। अपने आरम्भिक जीवन में उन्होंने दादा भाई नौरोजी, गोपाल कृष्ण गोखले और सुरेन्द्र नाथ बनर्जी को आदर्श के रूप में स्वीकार किया था।

1906 में कलकत्ता में कांग्रेस अधिवेशन आयोजित किया गया था, इस अधिवेशन में दादाभाई को कांग्रेस अध्यक्ष बनाया गया था। जिन्ना ने इस अधिवेशन में दादाभाई के निजी सचिव के रूप में भाग लिया था और दोनो महाराजा दरभंगा के चौरंगी हाउस में ठहरे थे। अपने राजनीतिक जीवन के इस चरण में जिन्ना कांग्रेस के सदस्य थे और इस काल में उनका विश्वास था कि हिन्दू–मुस्लिम एकता के द्वारा ही स्वराज प्राप्त किया जा सकता है। 1914 में गाँधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौट कर आ गये। गाँधी जी के साथ जिन्ना की पहली भेंट इसी वर्ष सर जहाँगीर बी0 पेटिट द्वारा गाँधी जी के सम्मान में दी गई एक पार्टी में हुई थी। यद्यपि मुस्लिम लीग की स्थापना 1906 में हो चुकी थी, जिन्ना ने अपने आपको इस संगठन से दूर रखा था। यहाँ एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि आगा खाँ के नेतृत्व में मुस्लिम लीग का एक प्रतिनिधि मंडल वाइसराय लार्ड मिन्टो से शिमला में मिला था और उसने वाइसराय को मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन क्षेत्रों की रचना के लिए राजी कर लिया था जिसे मॉर्ले–मिन्टो सुधारों में 1909 में सांविधानिक रूप भी दे दिया गया। जिन्ना ने 1910 के कांग्रेस के इलाहाबाद अधिवेशन में पृथक निर्वाचन प्रणाली के विरोध में एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।

यद्यपि जिन्ना मुस्लिम लीग के सदस्य नहीं थे, तथापि यह संगठन उनसे परामर्श और मार्गदर्शन की अपेक्षा करता था। 1910 और 1911 में इस संगठन ने उनसे अनुरोध किया था कि वह ऑल इन्डिया मुस्लिम लीग की कौंसिल को सम्बोधित करें। 1912 में जिन्ना ने आगा खाँ की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई लीग की कौंसिल को भी सम्बोधित किया था। इस कौंसिल में लीग के संविधान को संशोधित किया गया था। इस बैठक में एक प्रस्ताव पारित किया गया था जिसमें यह कहा गया था कि लीग हिन्दु–मुस्लिम एकता में विश्वास करती है। स्पष्टतः जिन्ना को इस प्रस्ताव के पारित होने पर प्रसन्नता हुई होगी।

उपरोक्त विवेचना से यह प्रतीत होता है कि जिन्ना अपने राजनीतिक जीवन के आरम्भिक चरण में हिन्दू–मुस्लिम एकता के पक्षधर थे तथा वे राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ अपने सम्बन्धों को अटूट मानते थे। परन्तु जिन्ना के सम्बन्ध में यह समझ केवल सतही है। सच बात यह है कि जिन्ना ने आरम्भ में ही अपनी साम्प्रदायिक संगीर्णता का परिचय दे दिया था। इस सम्बन्ध में केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा। 1911 में प्रिवी कौंसिल ने मुस्लिम पर्सनल लॉ के सम्बन्ध में एक निर्णय दिया था, जो मुसलमान कट्टरवादियों के गले के नीचे नहीं उतर सका था। इस निर्णय के विरूद्ध इण्डियन लेजिस्लेटिव कौंसिल में जिन्ना ने कहा था, ''इस्लामी विधि प्रणाली में लोकनीति का कोई स्थान नहीं.....। मैं किसी भी ऐसे प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए सहमत नहीं हूँ जो मुसलमानों के व्यक्तिगत नियमों का उल्लघन करे। मेरे हिन्दू मित्र मुझ से इस बात में सहानुभूति करेंगे कि मैं अपनी विधि प्रणाली से इस सीमा तक बंधा हुआ हूँ कि मैं उसे बदलने में असमर्थ हूँ।''[2]

परन्तु जिन्ना की यह छदमवेशी राजनीति कुछ समय तक चलती रही। 1913 में मुस्लिम लीग की सदस्यता को ग्रहण करने के बाद भी जिन्ना के संबंध कांग्रेस के साथ मैत्रीपूर्ण बने रहे। 1915 में कांग्रेस का अधिवेशन बम्बई में हुआ, जिन्ना के आग्रह पर लीग का अधिवेशन भी बम्बई में किया गया। नौकरशाही ने इन अधिवेशनों को विफल बनाने का भरसक प्रयत्न किया। लीग के अधिवेशन में जिन्ना ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि भारत के लिए राजनीतिक सुधारों की योजना तैयार करने के लिए एक समिति नियुक्त की जाय। मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने जो इस समय लीग के सदस्य थे, इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। इसी आशय का एक प्रस्ताव कांग्रेस के अधिवेशन में भी पारित किया गया नवम्बर, 1916 में इन दोना समितियों की संयुक्त बैठक कलकत्ता में हुई और उन्होंने सुधारों का जो मसौदा तैयार किया, वह कालान्तर में ''लखनऊ समझौता'' के नाम से जाना गया। इस समझौते में विधान सभाओं तथा स्थानीय निकायों में मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन क्षेत्र निर्मित करने की बात स्वीकार की गई। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ''लखनऊ समझौते'' ने 1919 के भारत सरकार अधिनियम को स्वरूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। यहाँ स्मरणीय बात यह है कि 1910 में जिन्ना ने कांग्रेस अधिवेशन में पृथक निर्वाचन प्रणाली के विरोध में एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया था, वही जिन्ना 1915 में इस प्रणाली का समर्थन कर रहे थे। 1916 में बम्बई की प्रान्तीय कान्फ्रेंस में मुसलमानों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व की चार्चा करते हुए जिन्ना ने उसे अपने सम्प्रदाय का दृढ़ संकल्प घोषित किया। इस सम्मेलन में उन्होंने मुसलमानों के पृथक राजनीतिक संगठन की आवश्यकता एवं उपादेयता की भी चर्चा की ओर कहा कि मुस्लिम हितों की रक्षा तभी हो सकती है जबकि ''उनके सम्प्रदाय के राजनीतिक अस्तित्व को प्रभावशाली सुरक्षात्मक व्यवस्था के साथ जोड़ दिया जाय।''[3]

1940 में लाहौर प्रस्ताव पारित होने के बहुत पूर्व 1916 में ही जिन्ना ने मुसलमानों को एक ''कौम'' घोषित किया था। यह बताने की आवश्यकता नहीं कि ''कौम'' का हिन्दी रूपान्तरण ''राष्ट्र'' है। वह मुसलमानों को एक अल्पसंख्यक मात्र न मानकर ''राष्ट्र'' मानते थे। वह मुसलमानों को पृथक राष्ट्र का दर्जा देना चाहते थे ताकि हिन्दुओं और मुसलमानों में बराबर की स्थिति बनाई जा सके। लखनऊ समझौते में मुसलमानों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करवा कर जिन्ना ने विशेष ख्याति अर्जित की थी। वस्तुतः कांग्रेस ने इस व्यवस्था को इसलिए स्वीकार किया था ताकि राष्ट्रीय आन्दोलन की मुख्य धारा में मुसलमानों को भी शामिल किया जा सके। परन्तु वास्तव में ऐसा करना एक भूल थी। पृथक निर्वाचन क्षेत्रों की स्थापना एक संयुक्त राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष को

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327
E: ISSN NO.: 2349-980X

जन्म नहीं दे सकती थी, वह उन शक्तियों को अवश्य बल पहुँचा सकती थी जो राष्ट्र के विघटन के लिए काम कर रही थी।

1892 में जिन्ना का विवाह एमीबाई के साथ उस समय हुआ था जबकि उनकी आयु केवल 16 वर्ष की थी, परन्तु उनकी इस पत्नी की मृत्यु अल्पायु में ही उस समय हो गई थी जब वह लन्दन में विद्यार्थी थे। 1917 में जिन्ना ने अपना दूसरा विवाह अपने पारसी मित्र सर दिनशा पेटिट की पुत्री रतन बाई पेटिट (रत्ती पेटिट) से किया जो उनसे उम्र में 24 वर्ष छोटी थी। इस पत्नी से जिन्ना के एक पुत्री हुई। रत्ती का 1928 में निधन हो गया। रत्ती को जिन्ना के राजनीतिक कार्यो में बहुत अधिक रूचि थी, वह उनके साथ विचार–विमर्शो में भाग लेती थी।

1923 में जिन्ना ने इम्पीरियल लेजिस्लेटि्व कौंसिल के निर्वाचन में अपने आपको प्रत्याशी के रूप में प्रस्तुत किया। चुनाव के समय उन्होने मतदाताओं के नाम जो अपील निकाली, उसमें उन्होंने कहा, ''मेरा एकमात्र उद्देश्य यथाशक्ति अपने सम्प्रदाय की सेवा करना है।'' निर्वाचन पृथक प्रतिनिधित्व के आधार पर हुआ था और ''सम्प्रदाय की सेवा'' का संकल्प उन्हें लाभ पहुँचा सकता था। फलतः उन्हें निर्विरोध चुन लिया गया। मई 1924 में, लीग का खुला अधिवेशन लाहौर में हुआ जिसकी अध्यक्षता जिन्ना ने की। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा, ''स्वराज और हिन्दू–मुस्लिम एकता एक दूसरे के पर्यायवाची हैं।'' इम्पीरियल कौंसिल के निर्वाचन में अपने सम्प्रदाय की सेवा का संकल्प और हिन्दु–मुस्लिम एकता के राग का अलाप ..... ये दोनों बातें परस्पर विरोधी हैं, यह बात सुस्पष्ट है।

1927 में यह भारत की सांविधानिक समस्या का अध्ययन करने के लिए सर जॉन साइमन की अध्यक्षता में एक आयोग भारत आया तो काँग्रेस की ही भांति जिन्ना ने भी उसका इस आधार पर विरोध किया कि उसमें किसी भी भारतीय को स्थान नहीं दिया गया था। 19 नवम्बर, 1927 को बम्बई में साइमन कमीशन के विरोध में एक मीटिंग का आयोजन हुआ जिसमें जिन्ना ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया था, ''सांविधानिक आयोग, जिसकी घोषणा की जा चुकी है, भारत के लोगों को अमान्य है।'' इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि साइमन कमीशन के गठन के प्रश्न पर कांग्रेस और जिन्ना के दृष्टिकोणों में समानता थी। परन्तु मुस्लिम लीग के नेतृत्व में कुछ लोग ऐसे भी थे जो कमीशन के साथ सहयोग करना चाहते थे। फलतः इस प्रश्न पर मुस्लिम लीग में फूट पड़ गई थी।

20 मार्च, 1927 को दिल्ली में महत्वपूर्ण मुस्लिम नेताओं की एक बैठक बुलाई गई थी। जिसमें नई सुधार योजना में मुस्लिम माँगों के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया गया था। मीटिंग में इन माँगों को लेकर एक प्रस्ताव भी पारित किया गया। परन्तु प्रस्ताव को नेहरू कमेटी ने अस्वीकार कर दिया। मुस्लिम लीग ने भी नेहरू रिपोर्ट को अस्वीकार कर दिया तथा मार्च, 1929 में जिन्ना ने अपनी 14 सूत्री माँगों को प्रस्तुत किया। इस प्रकार भारत का राजनीतिक गतिरोध यथावत बना रहा। इसी वर्ष मई में ब्रिटिश लाक सभा के लिए निर्वाचन सम्पन्न हुए जिनमें लेबर पार्टी को विजय प्राप्त हुई और उसके नेता रेम्जे मैक्डॉनल को सरकार बनाने का अवसर प्राप्त हुआ। रेम्जे मैक्डॉनल ने इस समस्या का समाधान खोजने के लिए लन्दन में नवम्बर, 1930 में प्रथम गोलमेज सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन में जिन्ना ने मुस्लिम लीग की ओर से भाग लिया। 1932 में जब ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने साम्प्रदायिक पंचाट की घोषणा की तो उसमें जिन्ना के 14 सूत्रों को स्थान दिया गया। प्रथम गोलमेज सम्मेलन के उपरान्त जिन्ना इंग्लैण्ड में ही ठहर गए और उन्होंने कुछ समय के लिए राजनीति से सन्यास लेकर प्रिवी कौंसिल में वकालत आरम्भ कर दी। परन्तु 1934 में वह भारत वापिस आ गए और पुनः देश की राजनीति में सक्रिय हो गए।

2 जुलाई, 1935 को हिज़ मेजेस्टी की सरकार ने भारत सरकार अधिनियम, 1935 को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी। जिन्ना इस अधिनियम में अन्तर्निहित संघीय योजना के कट्टर विरोधी थे। अतः इस अधिनियम पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने अक्टूबर, 1935 में कहा कि ''वह संविधान हम पर लादा गया है। 1936 में जिन्ना ने मुस्लिम लीग को राष्ट्रीय स्तर पर संगठित करने का प्रयास किया। 1937 में 1935 के अधिनियम के अधीन प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनाव कराये गये। चुनाव में मुस्लिम लीग को उन सभी प्रान्तों में मुँह की खानी पड़ी जहाँ मुसलमान बहुमत में थे, उसे आंशिक सफलता केवल यू0पी0 में ही प्राप्त हुई थी। इसके विपरीत कांग्रेस को सामान्य रूप से इन चुनावों में बड़ी सफलता प्राप्त हुई थी। फलतः ब्रिटिश भारत के आठ प्रान्तों में कांग्रेस के मंत्रिमण्डल कायम हो गये। इस काल में जिन्ना का एक मात्र उद्देश्य मुस्लिम लीग को भारत के मुसलमानों की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था के रूप में मान्यता प्राप्त कराना था तथा स्वयं को उका एकमात्र पवक्ता।

वस्तुतः इस काल में उन्होने नेहरू जी के साथ जो पत्र–व्यवहार किया था उससे यह बात पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है। वह चाहते थे कि कांग्रेस उन मुसलमान नेताओं को महत्व प्रदान न करे जो उसके साथ थे और उनकी तुलना में वह जिन्ना को मुस्लिम सम्प्रदाय के सर्वाधिक महत्वपूर्ण नेता के रूप में मान्यता प्रदान करे। स्पष्टतः ऐसा करना न कांग्रेस के लिए सम्भव था और न नेहरू जी के लिए। फलतः कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच फासला बढ़ता गया। इस सन्दर्भ में लीग की ओर से कांग्रेस मंत्रिमण्डल पर मुसलमानों पर अत्याचार किये जाने के झूठे एवं निराधार आरोप लगाये गये। पीरपुर और शेरीफ रिपोर्टों के नाम से झूठ के पुलिन्दे तैयार किये गये। झाँसी, जालौन, हमीरपुर उपचुनाव में मतदाताओं की धार्मिक भावनाओं को उभारा गया और यह सब काम उसके नेतृत्व में किया गया जिसे लोग हिन्दू–मुस्लिम एकता का दूत कहत थे।

1938 में सुभाष चन्द्र बोस कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। बोस के साथ जो जिन्ना ने पत्र–व्यवहार किया उसमें उन्होंने लीग की ओर से जो माँगे प्रस्तुत की उसमें से मुख्य यह थी (1) कांग्रेस साम्प्रदायिक पंचाट का विरोध न करें (2) वन्देमातर् गीत का त्याग करें (3) गो हत्या का विरोध न करें तथा (4) मुस्लिम लीग को भारतीय

मुसलमानों का एक मात्र साधिकृत एवं प्रतिनिधि संगठन के रूप में मान्यता प्रदान करें। कांग्रेस के लिए इन मांगों को स्वीकार करने का कोई प्रश्न ही नहीं था।

1939 में जब भारतीय लोकमत से परामर्श लिए बिना औपनिवेशिक शासकों ने भारत की ओर से भी धुरी राष्ट्रों के विरूद्ध युद्ध की घोषण कर दी तो उसके विरोध में कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने त्याग–पत्र दे दिया। जिन्ना ने भारत के मुसलमानों से इस पर प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए ''मुक्ति दिवस'' मनाने की अपील की।

जिन्ना भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था को अनुपयुक्त मानते थे। उनका तर्क था कि जिस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में बोअर्स और ब्रिटिश समुदाय के मतभेदों के कारण प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र नहीं चल सका, उसी प्रकार से भारत में हिन्दुओं और मुसलमानों में मूलभूत भिन्नता होने के कारण उसे कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। लार्ड मॉर्ले के तर्क को उद्धृत करते हुए उन्होंने कहा कि ''कनाडा का फरकोर्ट भारत के ऊष्णकटिबन्धीय जलवायु में उपयोगी नहीं होगा।''[4] उन्होंने हिन्दू धर्म और इस्लाम को दो भिन्न सभ्यताओं का प्रतीक बताया तथा कहा कि इन दोनों के बीच समन्वय सम्भव नहीं है।

अपनी इन राजनीतिक मान्यताओं के संदर्भ में जिन्ना के लिए यह उचित ही था कि वह मुसलमानों को एक अलग राष्ट्र घोषित करते। वास्तव में वह मुसलमानों को एक ''कौम'' 1916 में ही बता चुके थे। इस पृष्ठभूमि में मार्च 1940 में मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में यदि उन्होंने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और 'मुस्लिम राष्ट्र' के लिए पाकिस्तान की माँग प्रस्तुत की तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। लीग के लाहौर अधिवेशन के बाद जिन्ना अपनी पाकिस्तान की माँग पर बराबर अड़े रहे। इस बीच ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने भारत की राजनीतिक समस्या के समाधान के लिए अनेक प्रयास किए। यह ठीक है कि इन प्रयासों के मूल में राजनीतिक ईमानदारी कम थी, युद्ध में उनके लिए उत्पन्न प्रतिकूल परिस्थितियों से जन्य बाध्यतायें अधिक थीं। 1940 में यूरोप में जर्मनी बुलंदी पर था, पोलैन्ड, आस्ट्रिया, चैकोस्लोवाकिया, बेल्जियम, फ्राँस आदि सभी उसके बूटों के नीचे थे। अतः इस सन्दर्भ में तत्कालीन वाइसराय लार्ड लिनलिथगो ने अगस्त प्रस्ताव प्रस्तुत किया। इसमें इस प्रकार से लीग को काँग्रेस के विरूद्ध खड़ा होने के लिए भड़काया गया था। जिन्ना ने इसके बावजूद अगस्त प्रस्ताव को ठुकरा दिया, यद्यपि मुस्लिम लीग की कार्यकारिणी अपनी 31 अगस्त, 1940 की बैठक में यह प्रस्ताव पारित कर चुकी थी, ''कमेटी को इस बात पर सन्तोष है कि हिज मैजेस्टी की सरकार ने समग्र रूप से मुस्लिम लीग की सभी मांगों को व्यवहारिक दृष्टि से स्वीकार कर लिया है।..... मुस्लिम लीग एक बार पुनः अपनी इस स्थिति को स्पष्ट करना चाहती है कि मुसलमान स्वयं में एक राष्ट्र है।'' इसी प्रकार 1942 में जब जापान की सेना ने भारत की दहलीज तक आ चुकी थी, ब्रिटिश सरकार ने क्रिप्स को भारतीय नेताओं से बात करने के लिए भजा। उस समय भी जिन्ना ने पाकिस्तान की मांग को लेकर क्रिप्स प्रस्तावों को अस्वीकृति प्रदान कर दी। 1944 में गाँधीजी के साथ बातचीत के दौरान उन्होंने गाँधीजी को लिखा, ''हमारा दावा है कि हम किसी भी परिभाषा अथवा कसौटी को क्यों न अपनायें, हिन्दू तथा मुसलमान दो बड़े राष्ट्र है। हम दस करोड़ का एक राष्ट्र है जिसकी अपनी विशुद्ध संस्कृति और सभ्यता, भाषा और साहित्य, कला तथा स्थापत्य, नाम तथा नाम व्यवस्था, मूल्यों तथा अनुपात की धारणा, विधिक कानून तथा नैतिक संहितायें, परिपाटियाँ तथा जंत्री, इतिहास तथा परम्पपराय, प्रवृत्तियाँ तथा महत्वाकांक्षायें हैं। संक्षेप में हमारा जीवन के प्रति अपना दृष्टिकोण तथा जीवन दर्शन है। अन्तरराष्ट्रीय विधि के प्रत्येक सिद्धान्त के अनुसार हम एक राष्ट्र हैं।[5]

द्वितीय युद्ध के समापन के समय भी शिमला सम्मेलन और बाद में केबिनेट मिशन के द्वारा भारत की समस्या को सुलझाने का प्रयास किया गया। परन्तु यह समस्या उलझी बनी रही। अन्त में 3 जून 1947 को लार्ड माउन्टवेटन योजना के अन्तर्गत भारत का विभाजन स्वीकार कर लिया गया तथा 09 जून 1947 को मुस्लिम लीग की काउन्सिल द्वारा भी विभाजन को स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार जिन्ना को अपनी पाकिस्तान की माँग को मनवाने में सफलता मिल गई। 15 अगस्त, 1947 को देश दो भागों में बंट गया ..... भारत और पाकिस्तान। जिन्ना पाकिस्तान के पहले गवर्नर–जनरल बने और 11 सितम्बर, 1948 को उनके इस पार्थिव शरीर का उनके ही नगर करांची में अन्त हो गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जोकिम अल्वा, लीडर्स ऑफ इन्डिया, थैकर एन्ड कम्पनी, बम्बई, 1943, पृ0 79
2. रफीक अफजल, स्पीचेज एण्ड स्टेटमेन्ट्स ऑफ जिन्ना (अशरफ लाहौर 1956), पृ0 21–22
3. हैक्टर बोलियो, जिन्ना : क्रिएटर ऑफ पाकिस्तान (जॉन मरे, लन्दन, 1954) पृ0 55
4. सम स्पीचेज एन्ड राइटिंग्स ऑफ मि0 जिन्ना पृ0 86–87
5. गाँधी–जिन्ना टोक्स, जुलाई–छ अक्टूबर, 1944 (हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली 1944) पृष्ठ 16